# शिव महिम्न स्तोत्र

और

# शिव ताण्डव स्तोत्र

भाषा टीका सहित

***

टीकाकार—पं० ज्वाला प्रसाद चतुर्वेदी

मूल्य : तीन रुपये

□□□

रणधीर बुक सेल्स (प्रकाशन) हरिद्वार

Book-Seller

# शिव महिम्न स्तोत्र की कथा

एक समय कोई गन्धर्व किसी राजा के अन्तःपुर के उपवन से प्रतिदिन फूल चुराकर ले जाया करता था। राजा ने चोर पकड़ने की बहुत कोशिश की लेकिन उसे देख न पाता था। अन्त में राजा ने उस पुष्प चोर का पता लगाने के लिए ये निश्चय किया कि शिव निर्माल्य (भगवान की मूर्ति से उतरे हुए फूल) के लांघने से चोर की अन्तर्धान होने की शक्ति नष्ट हो जाएगी, इस विचार से राजा ने शिव पर चढ़ी हुई फूल माला उपवन के द्वार पर बिखरवा दी।

फलस्वरूप गन्धर्वराज की उस पुष्पवाटिका में प्रवेश करते ही शक्ति कुंठित हो गई। वह स्वयं को क्षीण समझने लगा। उसने समाधि लगाकर तुरन्त ही इसके कारण का पता लगाया मालूम हुआ कि मेरी शक्ति शिव निर्माल्य के लांघने से कुंठित हुई है।

यह जानकर उसने परम दयालु श्री शंकर भगवान की ये वर्णन रूपी महिमा (महिम्न स्तोत्र) का गान किया। इसी स्तोत्र के बाद में शिव निर्माल्य तथा शिव स्तुति की विशेष महत्ता का प्रचार हुआ। इसी स्तुति के रचियता यही गन्धर्व-राज श्री पुष्पदन्त थे। इनकी यही रचना पुष्पदन्त विरचित श्री शिव का महिम्न स्तोत्र के नाम से प्रसिद्ध हुई।

॥ गणेशाय नमः ॥

❀ अथ ❀

# शिवमहिम्नस्तोत्रम्

## ॥ भाषाटीकासहितम ॥

—: ० :—

श्री पुष्पदन्त उवाच—

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्।
ममाप्येष स्तोत्रे हर! निरपवादः परिकरः ॥१॥

जानत न रावरो अनंत महिमा कौ अन्त
याते अनुचित जो महेस! गुन गाइबो,
हम तौ अग्यानी तो मैं ग्यानी ब्रह्म आदि हूँ की
बानी कौ लखात चूकी मूक बनि जाइबो।
मति अनुरूप रूप गुन के निरूपन में
होत जो न काहू पै कलंक अंक लाइबो,
दोस आसुतोस! तौ न मानिये हमारौ आज
गुन गाईबे को यौं कमर कसि आइबो ॥१॥

पुष्पदन्ताचार्य शिव की प्रार्थना करने लगे हे हर ! जो तुम्हारी महिमा का वर्णन नहीं कर पाता उस मनुष्य की हुई प्रार्थना जो तुम्हारे योग्य न होवे तो ब्रह्मा आदि देवता भी तुम्हारी प्रार्थना नहीं कर सकते हैं। इससे सब मनुष्य व देवता अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार प्रार्थना कर सकते हैं इस कारण हे दुःखहरण ! इस स्तोत्र से हमारी भी स्तुति का प्रारम्भ दोषरहित है । १ ।

यदि कोई कहे कि महिमा का अन्त क्यों नहीं जाना जाता, इसलिए दूसरा श्लोक कहते हैं।

**अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङमनसयो-**
**रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ।**
**स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः**
**पदे त्वर्वाचीने पतित न मनः कस्य न वचः ॥२॥**

पथ सौं अतीत मन बानी के महत्व तव,
स्रुतिहू चकित नेति नेति जो बदति है,
कौन गुन गावैं, है कितेक गुनवारो वह,
काकी उतै अलख अगोचर लौं गति है।
भगत उधारन कौं धारन करौ जो रूप
विविध अनूप जाहि जोइ रही मति है,
काकौ मन वाकौं सदा ध्याइबो चहत नायँ
काकी गिरा नायँ गुन गाइबो चहति है ॥२॥

हे महेश्वर ! आपकी महिमा वाणी और मन की प्रवृत्ति से बाहर है, इन दोनों की प्रवृत्ति अर्थात् संसार के सब पदार्थों में होती है, अर्थात् हे शिव ! आप से अलग की वस्तुओं को सब कोई जान सकता है, वेद भी सन्देह से ही आपका वर्णन करता है, इसी प्रकार वेद का भी सामर्थ्य नहीं है कि वे प्रत्यक्ष करा दे, तो कौन आपको विनय कर सके वा गुण जान सके। २।

मधुस्फीता वाचः परममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन् किं ! वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम ।
मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः ।
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन पुरमथन ! बुद्धिर्व्यवसिता ॥३॥

मधु के बरस दिव्य सरस सुधा सौं सनी,
बानी वेदमय निज मुख ते बखानी है,
तब मन रंजन निरंजन ! करेंगी कहा
देवगुरुहू की गुरुता सौं भरी बानी है ।
प्रभु गुन गान को महान पुण्य पाइ आज
पावन बनैगी गिरा मेरी यह जानी है,
गुन अवगाहिबे की महिमा सराहिबे की
याही ते पुरारि जू! सुमति उरआनि है ॥३॥

हे ब्रह्मन् ! देवताओं के गुरु वृहस्पति की भी प्रार्थना क्या तुमको कुछ विस्मय करा सकती है ? क्योंकि यह अमृत

के तुल्य मधुर और अलंकार सहित वाणियों के कर्ता हैं। यदि उनकी यह रीति है, तो मेरी क्या प्रभुता है ? हे त्रिपुरदहन ! मैं तो केवल 'पवित्र हो जाऊँ' इससे ही तुम्हारे गुणों का स्मरण किया है। ३।

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्
त्रयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन वरद ! रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः ॥४॥

विदित विभूति भूतनाथ तव संसृति कौ
सृजन भरन तैसे हरन करति है,
वेद ते भनित गुन भेद ते विभिन्न बपु
तीनि देव—विधि हरि हर में लसति है।
ताहू की महत्ता और सत्ता खंडिबे के हेतु
निन्दा जगती मैं करैं केते जड़मति हैं,
प्रीति होति जा में नाहिं पंडित प्रबीनन की,
मंगल बिहीनन की होति वा में रति है ॥४॥

हे वरद् ! तीनों वेदों के सार-रूप जगत की उत्पत्ति रक्षा और प्रलय का कारण जो आपका ऐश्वर्य है, वह सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण यह तीनों इस शरीर में वर्तमान हैं। अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, शिव ये तुम्हारे ही सामर्थ्य से उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करते हैं। हे भगवन् ! इस

संसार में कुछ मूर्ख तुम्हारे ऐश्वर्य में भी 'सामर्थ्य सम्भव नहीं है' ऐसा कहते हैं, जिसको पापी मंगलकारी समझते हैं। ४।

किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगत ॥५॥

कैसी करै ईहा, कैसी मन में समीहा करै,
कैसौ वाको तन, कैसो करत जतन है,
कौन ठांयं बैठि कै विधाता तीन लोकन कौ
कौन उपादान लैकै सारत सृजन है।
कुतरक ऐसे रख मूरख लरत केते
मोह में परत ओह! जन गन मन है,
वैभव अतर्क्य नाथ! साथ सब शक्ति कहां,
रावरे मैं बावरे तरक कौ सरन है ॥५॥

कुछ महामूर्ख संसार के अज्ञान निमित्त यह कुतर्क करते हैं कि यह ब्रह्मा किस इच्छा से किस शरीर से वा किस उपाय और किस कारण से तीनों लोकों को उत्पन्न करता है? क्योंकि तुम्हारे ऐश्वर्य में संसार उत्पन्न करने के लिए कोई सामग्री दुर्लभ नहीं है। ५।

अजन्माना लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता।
माधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति।
अनीशो वा कुर्याद भुवनजनने कः परिकरो।
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर ! संशेरत इमे ॥६॥

अमित अनूप रूप रंग अंग बारे तऊ,
ऐते सब लोक क्यों रे जन्म न धरत हैं,
कै धों या प्रपंच कौ न सिरजनहार कोऊ,
बिन करतार सृष्टि कारज सरत है ?
सिरजनहार जोपै ईस छांडि आन कोऊ,
सोऊ कौन साधन लै सृजन करत है।
कारन कहा जो देव ! वारन तिहारौ करि
बार बार संसय में मूरख परत हैं ॥६॥

हे भगवन् ! भू आदि जो सात लोक हैं, वे सावयव हैं इनकी उत्पत्ति क्या किसी से नहीं है ? जो अवयव सहित हैं, वे उत्पत्ति सहित हैं। बिना ईश्वर की कृपा के संसार की रचना सम्भव नहीं हो सकती और यदि बिना ईश्वर के संसार की उत्पत्ति है तो उत्पत्ति में क्या सामग्री आवश्यक है, जिस प्रकार मूर्ख मीमांसक ईश्वर के होने में सन्देह करते हैं, अर्थात् आपके होने में कुछ सन्देह नहीं है। ६।

त्रयी सांख्यं योगः पशुमतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।

रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥७॥

तीन बेद, साँख्य, जोग सैव बैष्नवादि मत
भिन्न भिन्न मारग अनेक कहियतु है,
योई बड़ौ, वोई बड़ौ, यासौं लाभ, वासौं लाभ
सब रुचि भेद सों सरहि चहियतु है।
केते गहैं सूधे, केते मारग असूधे गहैं,
अन्त सबही कौ एक आप लहियतु हैं।
सरित प्रबाह बहै सूधी कै असूधी राह,
सतत अथाह सिंधु ही तौ गहियतु हैं ॥७॥

हे भगवन्! तीनों वेद, सांख्यशास्त्र, योग शास्त्र, शैवमत, और वैष्णवमत इन पांचों के अलग २ मार्ग हैं। अपनी-२ इच्छा के अनुसार इन मार्गों पर चलने वाले मनुष्य को फल में पहुंचाने योग्य एक तुम्हीं हो। जैसे सीधे या टेढ़े मार्ग में बहती हुई नदियों का रास्ता एक समुद्र ही है। ७।

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्।
सुरास्तां तामृद्धिं विदधति भवद्भूप्रणिहितां
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥८॥

रूढ़ौ बूढ़ौ बैल, पायौ खाटकौ, कुठार, चाम,
भस्म व्याल, कर मैं कपाल छवि पावै हैं,
बरद ! तिहारे ढिग कुल के भरन हित,
एतेक बरन उपकरन लखावै है।
तौहू तव भृकुटि बिलासही ते देव सबै
पास रिद्धि सिद्धि कौ सुपास सदा पावै हैं,
आतम सरूप में जौ मन को रमावैं सदा,
विषय मरिचिका न ताहि भरमावै है ॥८॥

हे बरद ! आपके घर की वस्तु केवल इतनी ही हैं। महोक्ष अर्थात् बूढ़ा बैल, खट्वाँग अर्थात् खाट की पाटी, ब्रह्म का कपाल, फरसा, सिंहचर्म, भस्म और सर्प, परन्तु देवता ही केवल आपकी कृपा कटाक्ष से दी हुई ऋद्धियों को भोगते हैं, तो विषय रूपी मृगतृष्णा, (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्दरूपी मृगतृष्णा, ब्रह्मप्राप्त मनुष्य को भ्रम में नहीं डाल सकती। ८।

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये।
समस्तेऽप्येतस्मिन पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्रेमित्वां ना खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥९॥

कोऊ कहै सारौ यह जग कौ पसारौ नित्य,
कोऊ बिस्व अखिल अनित्य बतरावैं है,
कोऊ या सकल जग बीच भनैं दोऊ भाव,

नित्य औ अनित्य या में पृथक लखावै है।
सुनि गुनि बात एती चित्त है चकित होत,
या ते गुन गावत न दास ये लजावै है,
बोलिबे को आदी हौं, सुभाव बकबादीपन,
सोई त्रिपुरारि ! आज लाज बिसरावै है ॥९॥

हे त्रिपुरारि ! कोई २ बुद्धिमान् इस संसार को स्थिर और कोई अस्थिर और कोई स्थिरास्थिर (मिला हुआ) कहते हैं। इस संसार के स्थिर और अस्थिर और स्थिरास्थिर होने में प्रमाण न मिलने से बड़े भ्रम में पड़कर मैं तुम्हारी बराबर स्तुति करता हुआ लज्जित होता हूं फिर भी मेरी बकवास ढिठाई कर रही है। ९।

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरिञ्चो हरिरधः
परिच्छेत्तुं यायावनलमनिलस्कन्धवपुषः।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश ! यत
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ॥१०॥

तेज पुंजमय तव प्रकट हुतौ जो रूप
बाकी महिमा की थाह पाइबे जतन सौं,
नीचे गयौ हरि विधि ऊरध गमन कीन्हौं
पार नहीं पायौ, भयौ अपार स्रम तन सों।
हारि थकि रावरे करन गुन गान लागे
श्रद्धा सौं गिरीस भूरि भक्ति भरे मन सों,
खाय कै तरस दियौ आप ही दरस आप,
आवत न हाथ कहा नाथ के भजन सों ॥१०॥

हे गिरीश (हे कैलाशवासी शिवजी !) आपके ऐश्वर्य का अन्त देखने को बड़े यत्न से विष्णु तो पाताल और ब्रह्मा आकाश को गए तो भी आप के स्वरूप को न प्राप्त कर सके। पश्चात् बैठकर भक्ति और श्रद्धा से जब आपकी स्तुति करने लगे तो प्रत्यक्ष हुए। क्या आपकी सेवा निष्फल होती है ? नहीं, सर्वदा सफल ही होती है। १०।

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद्बाहूनभृत रथकराङ्गपरवशान
शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबले
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहरविस्फूर्जितमिदम ॥

कंटक बिहीन तीन लोक कौ अखंड राज
पायौ जो अधीन बिन जतन पसारे पै
धारी जो सुदृढ़ दससीस ईस बीस भुजा
जुद्ध काज खाज जाकी जाय ना निवारे पै।
सोऊ लखि परत पुरारी ! एक रावरेई
भारी भक्ति भावको प्रभाव निराधारे पै,
करि उपहार धरयो कमल समान निज
मस्तक अमल पद कमल तिहारे पै ॥११॥

हे त्रिपुरासुर के मारने वाले शिव ! रावण ने अपने शिररूपी कमलों की माला रचकर आपके चरणों का पूजन किया। इस दृढ़ भक्ति के प्रभाव से ही तीनों लोकों

को बिना परिश्रम से बिना शत्रु का कर अर्थात् निष्कण्टक करके अपनी भुजाओं को जो हर समय संग्राम को चाहती थीं, धारण किया। ११।

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं
बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि
प्रतिष्ठा त्वय्यासीदध्रुवमुपचितो मुह्यतिखलः ॥१२॥

रावरौ भजन सब काल दस भाल करि
पायौ जो बिसाल बाहु बिपिन सबल है,
रबरेई बास कयलास के उठायबे में
ताहि कौं लगायौ, प्रगटायौ निज बल है।
त्यौं ही आप नैसुक अंगूठा कौ हिलायौ सिरौ
नीचे लख्यौ नीच ना पतालहू में थल है।
साँची यह बात, रिद्धि सिद्धि अधिकात लखि
फूल्यो ना समात, मोहि जात सदा खल है॥१२॥

हे भगवन्! जिस रावण ने आपकी सेवा से बड़ा बलवान् भुजाओं का समूह प्राप्त कर आपके निवास स्थान कैलाश को भी उठा लिया, फिर जब आपने स्वाभाविक पाँव के अँगूठे से पर्वत को दबाया तब रावण को पाताल में भी स्थिर रहना मुश्किल हो गया। मूर्ख मनुष्य बड़प्पन पाकर अभिमान को प्राप्त होते हैं। १२।

यदृसिं सुत्राम्णो वरद ! परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः ।
न तच्चित्रं तस्मिन वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्नकस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥१३॥

ऊँची सुरपति की समूची जो समृद्धि ताहि
नीची करि राखी रिद्धि सिद्धि अधिकाए ते,
परिजन सरिस प्रजा कौं तीन लोकन की
कीन्हीं जो अधीन बलिसुत बल पाए ते ।
एहो बरदानी ! वा में बात है विचित्र कहा
रावरे चरन के भजन मन लाये ते,
बढ़त न को है, ऊँचे चढ़त न सोहै कौन
सामुहै तिहारे नाथ! माथ के नवाए ते ॥१३॥

हे वर देने वाले ! आपके चरणों के प्रताप से त्रिभुवन को वशीभूत करके परम उच्च इन्द्र पद को भी बाणासुर ने छोड़ दिया तो कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि आपके सामने जो सर झुकाता है वह सब प्रकार से वृद्धि के अधिकारी ही होते हैं ? । १३ ।

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्याऽसीद्यस्त्रिनयनविषं संहृतवतः ।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो !
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभय भङ्गव्यसनिनः ॥१४॥

अन्त ब्रह्माण्ड कौ अकाण्ड ई है है हंत

सोचत ससंक यौं सुरासुर कौ गन है,
पेखि है अधीन करना के तीन लोचन जु

पान करि कीन्हौं विष संकट समन है ।
यातें नीलकण्ठ ! नीलकंठ जो तिहारे अंक

सोहत सदाई बनि कण्ठ अभरन है,
वाको है बिकारहू सराहिदे के जोग जाकों

भव भय भारन विदारन व्यसन है ॥१४॥

हे त्रिलोचन ! जिस समय समुद्र मन्थन से हलाहल विष निकला उस समय देवता और राक्षसों को भय हुआ कि कहीं असमय में ही संसार का नाश न हो जाय । तब कृपा कर उनकी रक्षा के लिए जो आपने काल के समान विष को पान किया, वह विष भी आपके कण्ठ में अत्यन्त शोभा दे रहा है । संसार के भय को दूर करने वालों का विकार (नीलिना) भी अच्छा लगता है । १४ ।

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः ।
स पश्यन्नीश ! त्वामितरसुरसाधारणमभूत
स्मरः स्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु वध्यःपरिभवः॥१५॥

देवन दनुज में, मनुज हूँ मैं जग बीच
जाके पंच सायक न रंच कबौं हारे हैं,
साधे बिनु काज पद आधेंहु मुरत नायँ,
तुरत अधीन तीनों लोक करि डारे हैं।
सोऊ ईस ! मानि आन देव के समान तोहि
काम नाम सेस है अनंग गति धारे है,
बस करि राखै जो अतंद्र इंद्रन कौं
तिन अपमान मान हितहू बिगारैं है ॥१५॥

**हे ईश ! जिस कामदेव के बाण ऐसे प्रबल हैं, देवता राक्षस, मनुष्यों से व्याप्त इस संसार में बिना अपना कार्य सिद्ध किए कभी खाली नहीं होते हैं ऐसे कामदेव हे शिव ! आपको भी और देवताओं के तुल्य साधारण देखने से उस का नाम मात्र ही बाकी रह गया। अर्थात् नेत्राग्नि से उस का शरीर भस्म हो गया। जितेन्द्रियों का अपमान करना लाभदायक नहीं होता है। १५।**

**मही पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं**
**पदं विष्णोर्भ्राम्यद् भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।**
**मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा**
**जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता ॥१६॥**

तांडव अकांड में धमक पाय पायन की
डगमग धाम है धरा कौ धसकत है,
घूमत परिघ सी भुजान के अघात लागें
गात ग्रह गन के गगन कसकंत हैं।

छूटे जटाजूटन के झोकन ते बार बार
ताड़ित द्युलोक ओक हूं ते खसकत है,
एते पै कहत जग राखिबे को नाचौ आप
साँचौई प्रभुत्व वाम है कै बिलसत है ॥१६॥

हे भगवान् ! आप तो संसार की रक्षा के लिए नृत्य करते रहते हो अर्थात राक्षसों को नृत्य के आनन्द में मग्न कर उनसे कराते हो, और नृत्य के समय पैर की धमक से पृथ्वी भी सन्देह करती है कि 'मैं टूटी जाती हूं या पाताल में धंसी जाती हूं। जिस प्रकार भुजाओं के घूमने से विष्णु के स्थान (आकाश) के तारागण टुकड़े २ हो जाते हैं। उसी प्रकार लम्बी-लम्बी जटा को बार-२ झटकारने से देवलोक मार खाकर कठिनता से थमा रहता है। हे शिव! आपकी प्रभुता बड़ी विचित्र है। १६।

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ॥१७॥

जाते प्रगटत पय फेन को प्रकास दिव्य
धारा में मिलित तारागन सौं गुनित होत,
जाते सिंध संवृत अखंड महीमंडलहू
द्वीपरूप है कै हलखात औ भनित होत।

सोई व्योमव्यापी बारिबृन्द को प्रबाह नाथ !
माथ पै तिहारे लघु बिंदु ज्यौं लसित होत,
याही ते महेश जू ! अनूप रूप रावरे की
दिव्यता महत्ता जानी जात अनुमित होत ॥१७॥

हे शिव ! तारागणों से चमकता हुआ आकाश गंगा का जलसमूह जो आकाश पर्यन्त व्याप्त हो रहा है, सो आप के सिर पर सूक्ष्म जलकणों के समान दीखता है परन्तु आप ने उतने ही जल से समुद्र की तरह इस महाद्वीपाकार संसार को चारों ओर से घेर लिया है,सो हे भगवन् ! आपके दिव्य शरीर के महत्व का विस्तार इसी दृष्टान्त से अनुमान करने योग्य है । १७ ।

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति ।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधिर्विधेयैः
क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥१८॥

रथ वसुधा कौ, चाकौ सूर औ सुधाकर सों
सारथि कौ पद पदमासन कौ दीन्हों है,
आपही रथी हैं चाप लीन्हों मेरु मंदर कौ
अनुज पुरन्दर कौ बानरूप कीन्हो है ।
तृन से त्रिपुर कों जराइबे के काज कैसौ
साज यों अडंबर कौ साज साथ लीन्हौं है,
खेलति बिधेयन सों मति परमेसर की
परम स्वतंत्र है, न काहूं बस कीन्हो है ॥१८॥

हे भगवन ! तृणतुल्य त्रिपुरासुर को जलाने के लिए आपने इतना आडम्बर अर्थात पृथ्वी का रथ, सारथी ब्रह्मा जी, हिमालय पर्वत का धनुष, रथ के पहिये चन्द्रमा और सूर्य, श्रीविष्णुरूपी बाण रचा है। तो क्या त्रिपुरासुर रूपी तृण तोड़ने को भी इतने कठिन साधन आपने किये? जबकि संसार का संहार क्षणमात्र में ही कर सकते हैं। समर्थ लोग अपने आधीनों के साथ खेलने से पराधीन नहीं माने जाते हैं। १८।

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर ! जागर्ति जगताम् ॥१६॥

सहस सरोजन उपायन लै रोज रोज
पाँयन में रावरे चढ़ायो हरि नेम सौं
क्न लखि एक एक दिन दुख दूनौ मानि
निज नैन कजहू निकासी धरयो प्रेम सौं
ाई भक्ति भूरि फरी कर में सुदर्शन है
दीपै जो समीपै सदा श्रीपति के हेम सौं
ोंक हरिबे कौं, भरिबे कौं तीन लोकन कौं
सोई त्रिपुरारि चक्र जामै सदा क्षेम सों ॥१६॥

हे त्रिपुरान्तक ! श्री विष्णुजी सहस्त्रकमल लेकर आपके चरणों का पूजन करते समय एक कमल कम रहा देखकर दृढ़ भक्ति से उन्होंने अपना नेत्र निकाल कमल की जगह देकर पूजन पूर्ण कर दिया । श्रीविष्णुजी की यह दृढ़ भक्ति सुदर्शन चक्र का रूप होकर तीनों लोक में रक्षा कर रही है । १९ ।

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते ।
अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं
श्रुतौ श्रद्धा बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥२०॥

सौंवैं जग्य दान, तऊ आप जजमानन कों
नित फल देन काज जागत रहत
साधन कहाँ है छोड़ पुरुष आराधन कों
बीते कर्महू को फल जाते प्रगटत
देखत सबैई फल दीबे हेतु जग्यन में
स्वामी समरथ आप जामिन बनत
यातें धरि आस बिस्वास बेदबादन पै
कर्म करिबे में लोग चाव सौं लगत हैं । २०

हे भगवन ! आप ही को यज्ञ फल देने वाला जान कर और देवताओं में दृढ़ विश्वास कर मनुष्य कटिबद्ध हो कर कर्मों को करते हैं, क्योंकि जब कार्य समाप्त होता है तो आप ही विद्यमान रहते हो यदि कहो कि नष्ट कर्म हो

फल देता है तो निश्चय है कि चैतन्य पुरुष को उपासना के बिना नष्ट कर्म भी फल देने वाले नहीं होते। अर्थात कर्म-मात्र के फलदाता आप ही हो। २०।

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रंषस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवंकर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः॥२१॥

जजमान दच्छ हैं क्रिया में अति दच्छ जहाँ
अखिल अधीस जिन्हैं जानैं प्रजाजन हैं
एही सरनागत को पालन करनहार
ऋषिबृंद ऋत्विज, सदस्य सुरगन हैं
हाथ सों तिहारे नाथ जग्य कौ बिनास तहाँ
जाहि जग्य फलके विधान को व्यसन है
साँचि यह बात होति हानि जजमान ही की
जानि जो करत बिन श्रद्धा कौ जतन है।२१

हे शरणागतरक्षक! यज्ञ की क्रिया में कुशल दक्ष प्रजापति जैसा यज्ञकर्ता यजमान और जिसके सभासद ब्रह्मादि देवताओं का समूह और त्रिकालदर्शी ऋषि जिसमें यज्ञ कराने वाले थे। इतने पर भी यज्ञ बिगड़ जाय तो आश्चर्य है, सो हे भगवन! आपकी अश्रद्धा ही से यज्ञ का नाश हुआ। क्योंकि यज्ञ के फलदाता आप ही हैं। आपकी श्रद्धा से जो किया जाय वह सब सफल ही होगा। २१।

प्रजानाथं नाथ ! प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषमृष्यस्य वपुषा ।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥२२॥

बस में अनंग के ह्वै निज तनुजा के संग
धायो बिधि करन प्रसंग बरजोरी सौं
ताहीं धरी लाज सौं गरीं सी हरिनी ह्वै भगी
ह्वै कै प्रजानाथहू हरिन चल्यौ चोरी सौं
पेखि यह पाप आप चाप कौं चढ़ायो, छूटि
बेध्यौ मृग ब्याध ज्यौं सपंख सर, डोरी सौं
नाकहूं गए पै डरि ना कहूं तजै है अबों
बान सो पिनाकपानि जू कौ खरौ खोरी सौं ।२२

यहाँ उषा और सूर्यदेव के प्रातःकालिक संयोग का रुचिर रूप के द्वारा वर्णन किया गया है ।

हे नाथ ! जिस समय ब्रह्मा काम में वश हो रमण की इच्छा से अपनी पुत्री के पीछे दौड़े तब वह कन्या पाप के डर से मृगी बनकर भाग चली । उस समय ब्रह्मा ने भी मृग का रूप धारण कर उसका पीछा किया । उस समय आपने ऐसी अनीति देखकर मृग पर धनुष हाथ में लेकर शिकार का उत्साह किया तो वह ब्रह्मा स्वर्ग तक भागे परंतु आपके धनुषने उनका पीछा नहीं छोड़ा । आपका धनुष बाण अन्यायियों का पीछा कभी नहीं छोड़ता है ।२२।

स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमन्हाय तृणवत
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि ।
यदि स्त्रैणं देवी यमनिरतदेहार्धघटना-
दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः ॥ २३॥

अपनी लुनाई के भरोसे गिरिजा न लख्यौ
चाप गहें दाप सौं कुसुम धनु वारौ है
संजम निरत सुरभंजन ! भया सौ तहाँ
सामुहैं तिनूका सौ तुरत जरि छारौ है
ताहू पे तिहारे तन आधे मैं निवास पाय
दास तिय कौ जो तुम्हें करति बिचारौ है
चारौ कहा, बरद ! बिचारौ एती गूढ़ बात
मूढ़ जुवतीन की जमात निरधारौ है ।२३

हे भगवन ! आपने धनुषधारी कामदेव को शीघ्र ही भस्म किया, उसका आधा शरीर पैदा कर अपने शरीर में धारण किया । यह लीला देखकर निज स्वरूपाभिमानी पार्वती जी आपको स्त्री पर आसक्त समझती हैं, क्योंकि कामदेव को भस्म किया और फिर उत्पन्न कर अपने शरीर में धारण किया । परन्तु हे भगवन! आपमें यह दोष लगाना यथार्थ में सत्य नहीं, क्योंकि युवती स्त्री अर्धांगिनी होती है, उनके कहने में क्या लगता है ।२३।

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर ! पिशाचाः सहचरा
श्चितभस्माऽऽलेपः स्त्रगतिनृकरोटी परिकरः ।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलः ।
तथाऽपि स्मर्तृणां वरद ! परमं मंगलमसि ॥२४॥

भेष अड़बंग लै अनंग अंगहारी आप
नाचत मसान मैं पिसाच सहचारी हैं
भासत चिता कौ लग्यौ भसम निराला तन
माला निरमुंडन के झुंडन की भारी है
मिलित अमंगल सौं सील यौं लखायौ करै
भायौ करै विपरीत रीति त्यों तिहारी है
तोहू जे तिहारे पद सुमिरनहारे तिन्हैं
बरद ! सहारे आप अति सुभकारी हैं ।२४

**हे मदन-दहन ! जिनके देखने या सुनने से ग्लानि तथा भय होता है । जैसा कि श्मशान तो खेलने का स्थान, खिलाड़ी भूत-पिशाच आदि,आभूषण चिता का भस्म शरीर में लगा हुआ, मनुष्य खोपड़ियों की माला पहने हुए ये सब अमंगल पदार्थ हैं तो भी हे वरद शिव ! स्मरण करने वाले को आप सर्वदा मंगल ही करते हो ।२४।**

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायाऽऽत्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्संगितदृशः ।

यदालोक्याऽऽल्हादं हृद इव निमज्ज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान॥२५॥

अंतरमुखी कै मन, थापि चित्त चेतना में
सब बिधि ही सौं प्रानायाम में निरत हैं
जोगी अवदात जाहि देखि पुलकित गात
आनन्द सलिल स्रोत नैंन ते झरत हैं
जाको ध्याइह भरत उमंग भूरि मानस में
सर में सुधा के मनो मंजन करत हैं
आप ही सो अकथ अनूप रूप वस्तु, जाहि
अंतर में संजमी निरन्तर धरत हैं ।२५

**हे भगवन ! योगीजन प्राणायाम कर और आत्मा को हृदय के बीच में ठहराकर जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता ऐसे तत्व को देखकर आनन्द प्राप्त करते हैं । जिस से उनके रोएँ खड़े हो जाते और नेत्र तृप्त हो जाते हैं, मानो अमृतमय तालाब में स्नान कर रहे हैं । वह अनिर्वचनीय तत्व आप ही का स्वरूप है ।२५।**

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च ।
परिच्छिन्नमेवं त्वयि परिणता बिभ्रति गिरं
न विद्मस्तत्तत्वं वयमिह तु यत्वं न भवसि ॥२६॥

आप ही प्रभाकर, त्यौं आकर कला के आप
आप ही अनिल, तैसे आप ही अनल है
आसमान है कै आप ही तौ भासमान होत
आतमाहू आप आप भूमि और जल हैं
या बिधि असीमहू कौ सीमित बतायौ करैं
मनुज प्रवीन पीन मति के सकल में
हम तौ न जानैं, या अखिल जड़ चेतन में
ऐसो कौन तत्व जो न आप अबिकल हैं ।२६

**हे शंकर ! सूर्य, चन्द्रमा, पवन, अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी और आत्मा आदि पदार्थ स्वरूप आप ही हैं । आपको जानने वाले आपके विषय में बहुत ही वर्णन कर सकते हैं, आगे उनकी बुद्धि चल नहीं सकती । अर्थात ऐसा कोई पदार्थ हम नहीं देखते जिसमें आप व्यापक न हों ।२६।**

**त्रयीं तिस्रो वृत्तिस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-**
**नकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृतिः ।**
**तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः**
**समस्तंव्यस्तंत्वांशरणद ! गृणात्योमिति पदम्॥२७॥**

तीनहू अवस्था, तीन बेद की बिबस्था कहै
तीनहू भुवन, तीन देवन लखावै है
बरन अकार सौं उकार सौं मकारहू सौं
रावरेई रूप के प्रकार बतरावैं है

तिन ते परे जो हीनविकृत तुरीय धाम
ताकौ अर्धमात्र सूक्ष्म ध्वनि सी जतावै है
एक है कै एक, त्यों अनेक है अनेकरूप
सरनद ! आप कों प्रनवपद गावे है ।२७

**हे शरण देने वाले ! आप सब में व्यापक होकर अर्थात् ओंकार से ऋग्, यजु, साम तीनों वेद जाग्रत, स्वप्न,सुषुप्ति तीनों अवस्था स्वर्ग, मृत्यु और पाताल तीनों लोक—ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तीनों देवता इनको धारण करते हुए आपका चौथा पवित्र धाम है, जिनको तुरीय कहते हैं, उस चैतन्य स्वरूप को भी स्मरण करता हुआ हे भगवन ! समस्त रूप में व्यस्त ऐसे आपकी स्तुति किया करता हूँ ।२७।**

**भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महां-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम ।
अमुष्मिन प्रत्येकं प्रविचरति देव ! श्रुतिरपि
प्रियायास्मैधामने प्रणिहितनमस्योऽस्मिभवते ॥२८॥**

भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, महादेव, उग्र
भीम औ ईसान—ये जो आठ दिव्य नाम हैं
एहो देव ! वेद इन में ते एक एकहू कौं
बोलिबे के हेतु बरनत आठों जाम हैं
प्रानहू ते प्यारे मेरे परम अधार आप
आप कौ सरूप दिव्य ललित ललाम हैं
याते हम भक्ति अनुरक्ति भरे अन्तर में
आप कौ निरन्तर ही करत प्रनाम हैं ।२८

हे देवाधिदेव ! १ भव (उत्पत्तिकर्ता) २ शर्व (सर्वरूप शुभ करता) ३. रुद्र (रोदन कर्ता) ४. पशुपति (जीवों का पालक) ५. उग्र (क्रोधी) ६. महादेव सब में महान विशिष्ट, ७. भीम (भयंकर) ८. ईशान (विशिष्ट, ऐश्वर्यवान्) के लिए सभी नमस्कार करते हैं।

**नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो।**
**नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर ! महिष्ठाय च नमः**
**नमोवर्षिष्ठाय त्रिनयन। यविष्ठाय च नमो**
**नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति शर्वा च नमः ॥२९॥**

एहो बन वीथिन में बिहरह बारे ! अति
निकट हमारे भगवान कों प्रनाम है
अति दूरवारे कौं प्रनाम मदनारे ! त्योंही
लघुतर परम महान कौं प्रनाम है
तीन नैनवारे प्रभो ! अतिवय बूढ़हू कौं
नव वय रूढ़ त्यों जबान को प्रनाम है
सब मैं तुम्हीं हौ, सब रूप में तुम्हीं हौ देव
'यह', 'वह' सकल जहान कौं प्रनाम है।२९

**हे कामदेवनाशक! आप समीप रहने वाले हो और दूर रहने वाले भी हो, सूक्ष्म-से-सूक्ष्म और बड़े-से-बड़े रूप को धारण करते हो, सब रीतिसे शिव आपको नमस्कार है।२९।**

बहलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः
जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥३०॥

बिस्व बिरचैवे कौ रजोगुन अधिक जाको
भव के प्रभाव भव रूप को नमन है,
तम के बढ़े पै जान समय संहारहू को
हर है हरत, हर रूप कौं नमन है ।
शुद्ध सत्व वृद्धि की सुजोग पाय लोगन कौं
सुख दैनवारे मृडरूप कों नमन है,
त्रिगुन रहित हित परम प्रकासमय
पद में लसित शिव रूप कौं नमन है ।३०

**संसार की उत्पत्तिके समय आपने रजोगुण सहित जो भव रूप धारण किया, और सृष्टिके पालन करने को सत्व गुण सहित सत्यरूप और प्रलय करने के समय तमोगुण सहित हर रूप धारण किया, मोक्ष के समय तीनों गुणों से रहित अर्थात निर्गुण शिव शान्तरूप धारण किया। हे भगवन ! आपके स्वयं प्रकाश अनेक शिव स्वरूपों को नमस्कार है ।३०।**

कृशहरिणाति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लघिंनी शश्वदृद्धिः ।

इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधा-
द्धरद ! चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥३१॥

मेरो यह चित्त कहां चेरौ सै कलेसन कौ
सुध बुध कलप अलप अति पायौ है,
सीमा हीन रावरी सनातन समृद्धि कहां
लौंघि गुन सीमा के परेई दरसायौ है
याते लखि चकित चकित मोहि भक्ति तब
बरद बलात गुन गान में लगायौ है
रुचि अनुसार यह बचत सुमन हार
रावरे चरन उपहार लै चढ़ायौ* है ।३१

हे वर देने वाले ! आपकी महिमा का तो अन्त नहीं है और मेरा चित्त रागद्वेष और क्लेश आदि के वश होकर परिणाम में दुर्बल है । इसी प्रकार जब मैं गुणों के वर्णन से भयभीत हुआ तब मेरी भक्ति ने उत्साह देकर वाणीरूपी फूल की माला आपके चरणारविन्दों को पहना दी अर्थात मेरी सामर्थ्य कहां जो आपके गुणों का वर्णन करूँ, यह मेरी भक्ति ने थोड़ा सा वर्णन कराया है ।३१।

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं ! न याति* ॥३२॥

---

* ये ३२ श्लोक शिवजी की महिमा के हैं। इसके आगे के स्तोत्रों में अन्त तक फल और आपके नामों की विशेषता लिखी है।

कारे गिरिराज तुल्य काजर कौं घोरि घोरि
स्याही करि राखै, महासिंधु मसिदानी है,
भाषा लिखिबे को साखा सुरतरु लेखनी है
कागद की करी त्योही पूरी वसुधानी है
लै कै सब साधन अराथन में लीन सदा
लिखित महेस गुन गन की कहानी है
हारैथकि साथ, गुन गाथ कौं तिहारे नाथ
तदपि न पावै पार सारदा सयानी है ।३२

**हे भगवन! यदि सरस्वती नील-पर्वत के बराबर काजल स्याही समुद्ररूपी पात्र में डालकर कल्पवृक्ष रूपी लेखनी से आपके गुणों को लिखे तो भी पार नहीं पा सकती क्योंकि आपके अनन्त गुण हैं और हमारी तो सामर्थ्य ही क्या है जो आपके गुणों का वर्णन कर सकें। ३२।**

असुरसुरमुनीन्द्रैरचितस्येन्दुमौले-
र्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ।
सकलगुणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार ॥३३॥

पूजत जिनहि सुर असुर मुनीद्र बृंद
भाल जिनकेई बाल इन्दु छबि पायौ है
गुन ते रहित हितरूप वे महेश, जिन
गुन महिमा कों इतै बरनि सुनायौ है

खास उनकेई दास गन में महान एक
नामवन्त है जो पुष्पदन्त कहलायो है
वानेई अलघु मृदु छन्द बन्द बारो यह
वन्दन के काज अभिनन्दन बनायौ है ।३३

**सकल गुणों में श्रेष्ठ पुष्पदन्ताचार्य ने यह सुन्दर स्तोत्र देवताओं, राक्षसों और मुनियों से पूजित और चन्द्रमा जिस के मस्तक पर शोभायमान है । प्रसिद्ध जिनके गुण हैं । ऐसे निर्गुण श्री शिवजी की महिमा मनोहर विस्तृत छन्दों में की है ।३३।**

**अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत**
**पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः ।**
**स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र**
**प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्तिमांश्च ॥३४॥**

मानस में भारी भूरि भक्ति अनुरक्ति भरे
नित्त जो मनुज शुद्धचित्त है रहत है
स्तवन बिसेस या महेस महिमा कौ मंजु
रोज रोज बदन सरोज सौ कहत है
तजि सो असिव लोक सजि सिवलोक जाय
सिव भगवान की समानता गहत है
त्यौंही इतै सम्पदा अनन्त आयु दीर्घ लै
सुतहू कीरति औ सुकीरति लहत है ।३४

जो मनुष्य श्री शिवजी के इस सुन्दर स्तोत्र को प्रति दिन शुद्ध चित्त से पढ़ेगा व शिवलोक में इन्द्र के समान गिना जाएगा और इस संसार में धन, आयु, सन्तान और अच्छी कीर्ति पावेगा ।३४।

**महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः ।**
**अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम ॥३५॥**

देव न दूजौ महेश्वर के सिवा
है जो कहीं तौ समत्व न कोई,
त्यौं ही समीप महिम्न के हैं स्तुति
और जो राखे महत्व न कोई
मन्त्र अघोर ते और बड़ौ नहीं
और कौ इतै सत्व न कोई
श्रीगुरु ही त्यों महान जहान में,
है गुरु सों बड़ौ तत्व न कोई ।३५

सम्पूर्ण देवताओं में शिवजी के बराबर कोई दूसरा देवता नहीं है । शिव की स्तुति करने के बाद किसी दूसरे देवता की स्तुति की आवश्यकता नहीं । अघोर मन्त्र से बड़ा कोई दूसरा मंत्र नहीं है । शिवजीके समान इस पृथ्वी पर और कोई बड़ा तत्व गुरु से बढ़कर नहीं है ।३५।

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं योगादिकाः क्रियाः ।
महिम्नस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम ॥३६॥

दीक्षा, दान, सुतीर्थ, तप
अग्य आदि कृति ग्यान ।
होत न महिमन पाठ की
षोडस कला समान ॥३६

दीक्षा, दान, तप, तीर्थ करना, ज्ञान और यज्ञादिक कर्म महिम्न स्तोत्र के पाठ के फल के सोलहवें भाग के भी बराबर फल नहीं देते ।३६।

कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः
शशिधर वर मौलेर्देवदेवस्य दासः ।
स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्
स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः ॥३७॥

जिनके भाल बिसाल बल बिधु सोभा पावत
जो देवन के देव, देव जिन्हें सीस नवावत,
तिन कोई इक दास पास रहि बिजन डुलावत
पुष्पदन्त गन्धर्वराज जग बीच कहावत ।
निज प्रभु के ही कोप ते निज महिमा सौं जो गिरयौ
वाने स्तवन महिम्न कौ दिव्य दिव्यतर यह करयौ ॥३७

ये पुष्पदन्ताचार्य जो पहली योनि में कुसुमदशन नामक गन्धर्व थे, ये किसी समय एकांत में शिवजी और पार्वतीजी की आनंद की बातें छिपकर सुनने लगे तो शिवजी ने देखते ही यह शाप दिया कि—"जाओ तुम गन्धर्व पदवी से पतित होकर मनुष्य लोक में जन्म लो" तब उन्होंने यहाँ जन्म लेकर परम दिव्य इस महिम्न स्तोत्र से शिवजी को अत्यन्त प्रसन्न कर मनोवाँछित फल प्राप्त किया ।३७।

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः ।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम ॥३८॥

सुर नर मुनि सब पढ़ैं, करैं याकौ आराधन,
स्वर्ग और अपवर्गहु को यह एकै साधन ।
पुष्पदन्त कौ रचित स्तोत्र अनुपम गुनवारौ,
आराधन कौ यह अचूक फल साधनहारौ ।
जोरि जुगल कर पढ़त नर यदि इकचित नित प्रात है,
किंनर गन सौं गुन सुनत सिव समीप वह जात है ॥३८

पुष्पदन्ताचार्य का बनाया जो यह सुन्दर महिम्न स्तोत्र , वह देवता और मुनियों से पूजित और स्वर्ग तथा मोक्ष

को प्राप्त कराने वाला है। ऐसे स्तोत्र को जो मनुष्य एक चित्त होकर हाथ जोड़कर पढ़ता है, वह शिवजी के समीप जाता है और उसकी स्तुति किन्नर आदि करते हैं।३८।

**आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुष्पगन्धर्वभाषितम्**
**अनौपम्य मनोहारि पुण्यमीश्वरवर्णनम् ॥३९॥**

स्तवन रचित गन्धर्व कौ परिपूरन यह जान।
सिव बरनन मय मनहरन अनुपम सुचि कल्यान ॥३९

गन्धर्व अर्थात पुष्पदन्ताचार्य का कहा हुआ पुण्यकारी यह महिम्न स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ, इसके बराबर कोई दूसरा स्तोत्र नहीं है, इसमें शंकर का ही वर्णन है ।३९।

**इत्येषा वांमयी पूजा श्रीमच्छंकरपादयोः।**
**अर्पिता तेन मे देवः प्रीयतां च सदाशिवः ॥४०॥**

बचन रचनमय अर्चना यह अरपित सिव पाद।
सदा सदाशिव देवबर सोपर करैं प्रसाद ॥४०

यह स्तोत्ररूपी पूजा श्रीमहादेवजी के चरणकमल पर मैं (पुष्पदन्ताचार्य) ने चढ़ाई। इस स्तोत्र से श्रीसाम्बसदाशिव शंकर मुझ पर प्रसन्न होवें ।४०।

तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर।
यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः ॥४१॥

तत्त्व न जानौं ईस तव, कस तुम महिमा धाम।
महादेव जाविध जहां ताविध तुम्हें प्रनाम ॥५१

हे महेश्वर! हम आपका तत्व नहीं जानते, तुम्हारी महिमा भी नहीं जानी जा सकती। आप जैसे भी हैं जहां भी हैं मैं आपको प्रणाम करता हूं ।४१।

एककालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेत सदा।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोकं स गच्छति ॥४२॥

एक, दोय, तीनों समय पढ़त जो नर अभिराम।
सब पापन ते मुक्त सो बसत, सदा सिवधाम ॥४२

जो मनुष्य इस महिम्नस्तोत्र को एक बार, दो बार, या तीन बार नित्य पढ़ेगा, वह संसार के पापों से छूटकर शिव लोक को प्राप्त होगा ।४२।

श्री पुष्पदन्तमुखपंकजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण।

कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन,
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥४३॥

पुष्पदन्त मुख कंज ते प्रगटयौ स्तोत्र उदार,
रासि रासि अघ हरत है, हर कौ परम पियार ।
कंठ किएं याकें पढ़ें, करिबे ते नित ध्यान,
होत प्रसन्न महेस वर भूतनाथ भगवान ॥४३

**श्रीपुष्पदन्ताचार्य के मुख से कहा हुआ जो यह शिव प्रिय पापनाशक महिम्नस्तोत्र है, चित्त लगाकर इसको याद कर पाठ करने से भूतपति श्री महादेव जी अत्यन्त प्रसन्न होते हैं ।४३।**

॥ शिवमहिम्नः स्तोत्र सम्पूर्ण ॥

# शिवताण्डवस्तोत्रम् ।

★★★

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजंगतुंगमालिकाम ।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम् ॥१॥

सघन जटामंडल रूपवन से प्रवाहित होकर श्रीगंगाजी की धारायें जिन शिवजी के पवित्र कंठ प्रदेश को प्रक्षालित करती (धोती) हैं, और जिनके गलेमें लम्बे-लम्बे बड़े-बड़े सर्पों की मालायें लटक रही हैं, तथा जो शिवजी डमरूको डम डम डम बजाकर प्रचण्ड ताण्डव नृत्य करते हैं, वे शिव जी हमारा कल्याण करें । १ ।

जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी-
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्धनि ।

धगद्धगद्धगज्जवलल्ललाटपट्टपावके
किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं ममं ॥२॥

अति गम्भीर कटाहरूप जटाओं में अतिवेग से विलास पूर्वक भ्रमण करती हुई देवनदी गंगाजी की चंचल लहरें जिन शिवजीके शीश पर लहरा रही हैं, तथा जिनके मस्तक में अग्नि की प्रचंड ज्वालायें धधक-धधक करके प्रज्वलित हो रही हैं, ऐसे बालचंद्रमा से विभूषित मस्तक वाले शिव जी में मेरा अनुराग (प्रेम) प्रतिक्षण बढ़ता रहे । २ ।

धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुर-
स्फुरद्दृगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे ।
कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि
क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ॥३॥

पर्वतराजसुता के विलासमय रमणीय कटाक्षों से परम आनन्दित चित्त वाले (माहेश्वर) तथा जिनकी कृपादृष्टि से भक्तों की बड़ी से बड़ी विपत्तियां दूर हो जाती हैं ऐसे (दिशाही हैं वस्त्र जिसके) दिगम्बर शिवजी की आराधना में मेरा चित्त कब आनन्दित होगा । ३ ।

जटाभुजंगपिंगलस्फुरत्फणामणिप्रभा-
कदम्बकुंकमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे।
मदान्धसिन्धुरस्फुरत्वगुत्तरीयमेदुरे
मनो विनोदमद्भुतं विभर्तु भूतभर्तरि ॥४॥

जटाओं में लिपटे सर्प के फण के मणियों के प्रकाशमान पीलेवर्ण प्रभा-समूहरूप केसर कान्ति से दिशा बन्धुओं के मुख मण्डल को चमकाने वाले, मतवाले गजासुर के चर्म रूप उभरने से विभूषित, प्राणियों की रक्षा करने वाले शिव जी में मेरा चित्त विनोद को प्राप्त हो। ४।

ललाटचत्वरज्वलद्धनंजयस्फुलिंगया-
निपीतपंचसायकं नमन्निलिम्पनायकम्।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं
महाकपालिसम्पदे सरिज्जटालमस्तु नः ॥५॥

इन्द्रादि देवताओं का गर्व चूर्ण करते हुए जिन शिवजी ने अपने विशाल मस्तक की अग्नि ज्वाला से कामदेव को भस्म कर दिया, वे अमृत किरणों वाले चन्द्रमा की कान्ति

तथा गंगाजी से सुशोभित जटावाले, तेज रूप नरमुण्डधारी शिवजी हमको अक्षय सम्पत्ति दें । ५ ।

सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर-
प्रसूनधूलिधोरणीविधूसराङ्घ्रिपीठभूः ।
भुजंगराजमालया निबद्धजाटजूटकः
श्रियै चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः ॥६॥

इन्द्रादि समस्त देवताओं के सिर में सुसज्जित पुष्पों की धूलिराशि से धूसरित पादपृष्ठ वाले सर्पराजों की मालाओं से विभूषित जटावाले चन्द्रशेखर भगवान हमें चिरकाल के लिए सम्पदा दें । ६ ।

करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वल-
द्धनंजयाहुतीकृतप्रचण्डपंचसायके ।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक-
प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम ॥७॥

धक् धक् धक् जलती हुई अपने मस्तक की भयंकर ज्वाला से प्रचण्ड कामदेव को भस्म करने वाले तथा पर्वत

राजसुता के स्तन के अग्रभाग पर विविध भाँति की चित्रकारी करने में अति चतुर त्रिलोचन में मेरी प्रीति अटल हो । ७ ।

नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुरत
कुहूनिशीथिनीतमःप्रबन्धबद्धकन्धरः ।
निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्ति सुन्दरः ।
कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरन्धरः ॥८॥

नवीन मेघों की घटाओं से परिपूर्ण अमावस्याओं की रात्रि के घने अन्धकार की तरह अति गूढ़ कण्ठ वाले, देवनदी गंगा को धारण करने वाले, गजचर्म से सुशोभित, बालचन्द्र की कलाओं के बोझ से विनत, जगत के बोझ को धारण करने वाले शिवजी हमको सब प्रकार की सम्पत्ति दें । ८ ।

प्रफुल्लनीलपंकजप्रपंचकालिमप्रभा-
वलम्बिकण्ठकन्दलीरुचिप्रबद्धकन्धरम् ।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे ॥

फूले हुए नीलकमल की फैली हुई सुन्दर श्याम प्रभा से विभूषित कण्ठ की शोभा से उद्भासित कन्धे वाले, कामदेव तथा त्रिपुरासुर के विनाशक, संसार के दुःखों के काटने वाले, दक्षयज्ञविध्वंसक, गजासुरहन्ता, अन्धकासुर-नाशक और मृत्यु के नष्ट करने वाले श्री शिवजी का मैं भजन करता हूँ। ९।

अखर्वसर्वमंगलाकलाकदम्बमंजरी-
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणे मधुव्रतम।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे ॥१०॥

कल्याणमय, नाश न होने वाली समस्त कलाओं की कलियों से बहते हुए रस की मधुरता का आस्वादन करने में भ्रमररूप, कामदेव को भस्म करने वाले, त्रिपुरासुर-विनाशक, संसार दुःखहारी, दक्षयज्ञविध्वंसक, गजासुर, तथा अन्धकासुर को मारने वाले और यमराज के भी यमराज श्री शिवजी का मैं भजन करता हूँ। १०।

जयत्वदभ्रभभ्रमद्भुजंगमश्वसद-
विनिर्गमत्क्रमस्फुरत्करालभालहव्यवाट ।
धिमिद्धिमिद्धिमद्ध्वनन्मृदंगतुंगमंगल-
ध्वनिक्रमप्रवर्तितः प्रचंडतांडवः शिवः ॥११॥

अत्यन्त शीघ्र वेगपूर्वक भ्रमण करते हुए सर्पों के फुफकार छोड़ने से क्रमशः ललाट में बढ़ी हुई प्रचंड अग्नि वाले मृदंग की धिम धिम धिम मंगलकारी उच्च ध्वनि के क्रमारोह से चण्ड ताण्डव नृत्य में लीन होने वाले शिवजी सब भांति से सुशोभित हो रहे हैं । ११ ।

दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजंगमौक्तिकस्त्रजो-
र्गरिष्ठरत्नलोष्टयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः ।
तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः
समप्रवृत्तिकः कथा सदाशिवं भजाम्यहम् ॥१२॥

कड़े पत्थर और कोमल विचित्र शय्या में सर्प और मोतियों की मालाओं में, मिट्टी के टुकड़ों और बहुमूल्य रत्नों में, शत्रु और मित्र में तिनके और कमललोचनियों में,

प्रजा और महाराजाधिराजाओं में समान दृष्टि रखते हुए कब मैं श्री सदाशिव जी का भजन करूँगा । १२ ।

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुंजकोटरे वसन
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमंजलि वहन ।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः
शिवेति मंत्रमुच्चरन सदा सुखी भवाम्यहम ॥१३॥

कब मैं श्रीगंगाजी के कछारकुञ्ज में निवास करता हुआ, निष्कपटी होकर शिर पर अञ्जली धारण किए हुए, चंचल नेत्रों वाली ललनाओं में परम सुन्दरी श्री पार्वती जी के मस्तक में अंकित शिव मंत्र उच्चारण करते हुए अक्षय सुख को प्राप्त करूँगा । १३ ।

निलिम्पनाथनागरीकदम्बमौलमल्लिका-
निगुम्फनिर्भरक्षरन्म धूष्णिकामनोहरः ।
तनोतु नो मनोमुदं विनोदिनींमहनिशं
परश्रिय परं पदं तदंगजत्विषां चयः ॥१४॥

देवाँगनाओं के शिर में गुंथे पुष्पों की मालाओं के झड़ते

हुए सुगन्धमय पराग से मनोहर, परम शोभा के धाम श्री शिवजी के अंगों की सुन्दरताएँ परमानन्दयुक्त हमारे मन की प्रसन्नता को सर्वदा बढ़ाती रहें । १४ ।

प्रचंडवाडवानलप्रभाशुभ प्रचारणी
महाष्टसिद्धकामिनीजनावहूत जल्पना ।
विमुक्तवामलोचनो विवाहकालिकध्वनिः
शिवेति मन्त्रभूषणो जगज्जयाय जायताम ॥१५॥

प्रचण्ड बड़वानल की भाँति पापों को भस्म करने में स्त्री स्वरूपिणी अणिमादिक अष्ट महासिद्धियों तथा चंचल नेत्रों वाली देवकन्याओं से शिव विवाह के समय में गान की गई मंगलध्वनि सब मंत्रोंमें परम श्रेष्ठ शिवमन्त्र से पूरित, सांसारिक दुःखों को नष्ट कर विजय पावें । १५ ।

इमं हि नित्यमेवमुक्तमुत्तमोत्तम स्तवं
पठन्स्मरबन्ध्रुवन्नरो बिशुद्धिमेति सन्ततम ।
हरे गुरौ स भक्तिमाशु याति नान्यथा गति
विमोहनं हि देहिना तु शंकरस्य चिन्तनम ॥१६॥

इस उत्तमोत्तम शिवताण्डव श्लोक का नित्य प्रति मुक्त कंठ से पढ़ने से या श्रवण करने से सन्तति वगरह से पूर्ण हरि और गुरु में भक्ति बनी रहती है जिसकी दूसरी गति नहीं होती शिव की ही शरण में रहता है। १६।

पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं
यः शम्भूपूजनपरं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरंगयुक्तां
लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शम्भुः ॥१७॥

शिव पूजा के अन्त में इस रावणकृत शिवताण्डवस्तोत्र का प्रदोष समय में गान करनेसे पढ़नेसे लक्ष्मी स्थिर रहती है। रथ, गज, घोड़ा से युक्त सर्वदा रहता है। १७।

इति श्रीरावणविरचितं शिवतांडवस्तोत्रं भाषाटीका सहितं सम्पूर्णम्।

॥ श्रीशिवर्पणमस्तु ॥

———

[illegible]

[illegible]

[illegible]

## श्री काली उपासना

[illegible]

इस पुस्तक में काली उत्पत्ति की कथा, काली स्तुति, काली का स्वरूप, काली के मन्त्र, कालिका सहस्त्र नाम स्तोत्र, कालिकाष्टक और कई आरतियाँ श्री काली माता की स्तुति करने के लिए दी गई हैं। साधकों और मन्त्र-तन्त्र के इच्छुकों के लिए उत्तम पुस्तक है।

## श्री भैरव उपासना

इस ग्रन्थ में भैरव उत्पत्ति की कथा, भैरव चालीसा, भैरवाष्टक, भैरव के १०८ नाम भैरव सहस्त्र नाम स्तोत्र, बटुक भैरव यन्त्र, भैरव उपासना विधि, भैरो साबर तन्त्र कवच और भैरव जी की आरतियाँ इत्यादि सम्मिलित की गई हैं।

## रुद्राक्ष महात्म्य और धारण विधि

लेखक—बाबा [illegible] नाथ 'तपस्वी'

इस पुस्तक में रुद्राक्ष महात्म्य, रुद्राक्ष की उत्पत्ति, रुद्राक्ष के भेद, रुद्राक्ष धारण विधि, रुद्राक्ष की परम शक्तियाँ, रुद्राक्ष के लक्षण और मंत्र न्यास, जपमाला के लक्षण, रुद्राक्ष का रोगों में प्रयोग, रुद्राक्ष खरीदते समय सावधानियां तथा अनेक आवश्यक बातों का संकलन।

## रुद्राक्ष भस्म और त्रिपुण्ड्र विज्ञान

लेखक—डा. रामकृष्ण उपाध्याय

रुद्राक्ष की व्युत्पत्ति, उत्पत्ति लक्षण, महत्ता, मुखभेद, जातियाँ, धारण करने के मंत्र, माला जप, वनस्पति विज्ञान और आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से रुद्राक्ष का अध्ययन एवं भस्म त्रिपुण्ड्र से सम्बन्धित जानकारी।

## मन्त्र प्रयोग

लेखक—बाबा [illegible]नाथ 'तपस्वी'

इस पुस्तक में मन्त्र दीक्षा, मन्त्र में ध्यान, मंत्र में काल विचार, मंत्र में स्थान विचार, मंत्र में आसन और माला, मन्त्र जप का विधान, द्वादश राशियों के मन्त्र, रोग नाशक, भय नाशक मन्त्र परीक्षा में सफलता के मन्त्र, सिद्ध अघोरास्त्र मंत्र, सिद्ध वशीकरण मंत्र, स्त्री वशीकरण मंत्र, काली मंत्र, गन्धर्व राज मन्त्र व अन्य भी कई प्रकार के उपयोगी मंत्रों का संग्रह है।

## रणधीर बुक सेल्स (प्रकाशन) हरिद्वार